डार्विन का विकासवाद सिद्धांत

डार्विन का विकासवाद अत्यधिक महत्वपूर्ण माना गया है। इसे उनका अर्थात् डार्विन का जीवशास्त्रीय विकासवाद (Darwin's Theory of Biological Evolution) कहते हैं। इनकी दो प्रसिद्ध पुस्तकें हैं —

(1). The Origin of Species by means of Natural Selection. (1859).
(चुनाव द्वारा जीव-योनियों की उत्पत्ति)

(2). The Descent of Man and Selection in Relation to Sex.
(मनुष्य की उत्पत्ति)

डार्विन विकासक्रम को सरल से जटिल की ओर बताया है। प्रारम्भ में अत्यंत सरल जीवकोशिकाएँ थीं, जिनसे कालक्रम में विकसित होने से विभिन्न प्रकार के जटिल जीवों का प्रादुर्भाव हुआ। डार्विन का कहना है कि प्राकृतिक नियमों द्वारा ही विकासक्रम संचालित, नियंत्रित एवं निर्देशित होता है। अतः इस विकास-प्रक्रिया की व्याख्या के लिए किसी अलौकिक सत्ता को मानने की आवश्यकता नहीं है।

डार्विन ने विकास की वास्तविकता प्रमाणित करने के लिए चार मूल स्तम्भ बताया है। वे हैं — ① जीवन संघर्ष ② योग्यतम की जीवन रक्षा या प्राकृतिक चुनाव ③ शारीरिक परिवर्तन और ④ आनुवंशिकता।

(1). जीवन-संघर्ष (Struggle for Existence) :→

डार्विन जीवन-संघर्ष को विश्वव्यापी सत्य मानते हैं। प्रत्येक प्राणी अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। सभी को स्वयं का अस्तित्व कायम रखने के लिए सदैव सचेत रहना पड़ता है और आत्मरक्षा की भागदौड़ प्रारंभ हो जाता है। प्रकृति में एक प्रकार का संघर्ष छिड़ जाता है, जिसे जीवन-संघर्ष कहते हैं। इस संघर्ष में सभी सफल नहीं भी होते और जो सफल होते भी हैं, वे अपना अस्तित्व बनाये रखते हैं तथा उन्हें संतान उत्पत्ति का मौका भी मिलता है। असफल का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

डार्विन ने इस सिद्धांत को अपना कर इसका प्रयोग प्राणिजगत पर किया। अत: जीवन-संघर्ष का यहाँ व्यापक अर्थ निकलता है जिसके अन्तर्गत वे सारे प्रयत्न आते हैं, जो अपनी रक्षा या संतान की रक्षा के लिए किए जाते हैं। व्यक्ति संतान के माध्यम से भी परोक्ष रूप में जीवित रहता है। इस प्रकार जीवों की संख्या बढ़ जाने पर भोजन एवं आवास के लिए भी आपस में जीवन-संघर्ष प्रारम्भ हो जाता है और यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

(2). योग्यतम की जीवन रक्षा या प्राकृतिक चुनाव :→

(Survival of the Fittest or Natural Selection) -

जीवों के बीच अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए निरंतर संघर्ष छिड़ा हुआ है। इस संघर्ष में, डार्विन के अनुसार योग्यतम की विजय होती है और उसका अस्तित्व कायम रहता है। अत: डार्विन के अनुसार, 'योग्यतम' वह है जो वातावरण के साथ सफल अभियोजन में समर्थ हो। जो बदलती हुयी परिस्थितियों के साथ अपना अभियोजन करने में समर्थ वो वही योग्यतम है और उसी की जीवन रक्षा होती है। जो वातावरण में ऐसा करने में असमर्थ है उसका अस्तित्व नष्ट हो जाता है। जैसे 'बारहसिंघा'। वह अपने शारीरिक बनावट के चलते शिकारी की पकड़ में सहज ही आ जाता है और मारा जाता है। इसलिए उसकी संख्या आज बहुत कम है।

डार्विन योग्यतम की जीवन-रक्षा को 'प्राकृतिक-चुनाव' भी कहते हैं। ऐसा इसलिए कि प्रकृति योग्यम प्राणी को चुन लेती है और उसका अस्तित्व कायम रहता है। अचेतन प्रकृति यह कार्य नहीं कर सकती। डार्विन के कहने का यह ढंग है। विश्व के विशाल प्रांगण में मनुष्य योग्यतम माना जाता है और वह अन्य प्राणियों का स्वामी बना रहता है। इसलिए वह योग्यतम माना जाता है क्योंकि वह अन्य सभी प्राणियों के साथ अभियोजन में अधिक समर्थ है।

(3). शारीरिक परिवर्तन (Variations) :→ इस नियम के अनुसार उनका कहना है कि, जीवों की शारीरिक बनावट एवं इनके व्यापारों में सतत परिवर्तन होते रहते हैं। ऐसा होने से एक जीव दूसरे जीव से पृथक हो जाता है। इन परिवर्तनों में कुछ ऐसे होते हैं जो जीवों को वातावरण के अनुकूल बनाने में सहायक होते हैं। इन परिवर्तनों को 'उपयोगी परिवर्तन' (Favourable Variations) कहते हैं। इन्हीं उपयोगी परिवर्तनों के कारण जीवों को जीवन संघर्ष में विजय मिलती है, किंतु कुछ जीवों में शारीरिक गठन एवं व्यापारों में कुछ ऐसे भी परिवर्तन होते हैं जो वातावरण के अनुकूल इन्हें नहीं बनने देते। फलस्वरूप इनको जीवन संघर्ष से हारना पड़ता है। अतः शारीरिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप जीवों का अस्तित्व कभी सुरक्षित रहता है और कभी समाप्त हो जाता है।

डार्विन के अनुसार शारीरिक परिवर्तन भी दो प्रकार के हैं—

(i) वातावरण से प्राप्त शारीरिक परिवर्तन और
(ii) वंशागत शारीरिक परिवर्तन।

- अचानक और विराट परिवर्तन
- क्रमिक परिवर्तन (ये जीव-योनियों के विकास के लिए अधिक महत्वपूर्ण हैं)

(4). आनुवंशिकता (Heredity) :→ आनुवंशिकता-नियम के अनुसार, माता-पिता के शरीर में होने वाले परिवर्तन उनकी संतान में भी संक्रांत हो जाते हैं। इस तरह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संक्रांत होते-होते कई पीढ़ियों में जाकर अत्यंत सूक्ष्म परिवर्तनों के एकत्रीकरण के कारण जीवों में कोई बिलकुल नया अंग उत्पन्न हो जाता है। नए अंग के विकसित होने से ये परिवर्तित जीव अपने पूर्वजों से सर्वथा भिन्न हो जाते हैं और एक नयी जाति का उदय होता है। इस प्रकार से एकत्र परिवर्तन लाभदायक और

हानिकारक दोनों होते हैं। लाभप्रद परिवर्तनों के संचय से वैसे अंगों का विकास होता है, जो जीवन-संघर्ष में जीव को विजयी बनाते हैं और हानिकारक पराजय। इस प्रकार से, आनुवंशिकता-नियम के द्वारा ही शारीरिक परिवर्तनों का संचय होता है और परिणामस्वरूप नई जीव-योनियाँ उत्पन्न होती हैं। परंतु किस प्रकार के परिवर्तन पीढ़ी-दर-पीढ़ी संक्रांत होते हैं और इनके संक्रमण के क्या कारण हैं? इन प्रश्नों के उत्तर में डार्विन अपने ज्ञान की अपूर्णता स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करते हैं — "The Law governing inheritance are for the most part Unknown."

डार्विन के विकासवाद का मूल्यांकन :→

डार्विन के विकासवाद का विश्वव्यापी असर पड़ा। इसको समर्थन और विरोध दोनों प्राप्त हुए। वैज्ञानिक एवं प्रकृतिवादी विचारवालों ने इसका पूर्ण समर्थन किया। इसके विपरीत धर्मज्ञों, विशेषकर ईसाई पादरियों की ओर से विरोध भी हुए। इसके अतिरिक्त डार्विन के इस विकासवादी सिद्धांत के कुछ दोष भी हैं। जैसे कि,

(i). इनका विकास-सिद्धांत केवल जीव की व्याख्या करता है न कि संपूर्ण विश्व की।

(ii). ये जीवकोशिकाओं से जीव योनियों की उत्पत्ति की बात तो करते हैं, पर यह नहीं बताते कि प्रथम जीव कोशिका कैसे बनी?

(iii). इनका यंत्रवाद विश्व-प्रक्रिया का कोई लक्ष्य नहीं मानता।

(iv). इनका यंत्रवादी सिद्धांत विकासक्रम में होने वाली नवीनताओं के आविर्भाव की व्याख्या करने में असमर्थ है।

(v). इनके द्वारा प्रतिपादित जीवन-संघर्ष का सिद्धांत दोष-पूर्ण है।

(vi). प्राकृतिक निर्वाचन की भी तीव्र आलोचना हुई है।

(vii). शारीरिक परिवर्तन का नियम भी दोषपूर्ण है।

(viii). आनुवंशिकता का सिद्धांत भी अपूर्ण है, आदि।

इस प्रकार से उपर्युक्त दोषों के बावजूद डार्विन का विकासवाद अत्यधिक महत्वपूर्ण है। आज के वैज्ञानिक विकास की वास्तविकता को एक स्वर से स्वीकारते हैं और उनके मार्गदर्शन का कार्य करता है। डार्विन का विकासवाद, विकास-प्रक्रिया की संतोषजनक व्याख्या करने में भले ही असमर्थ है, पर इसने विचारकों एवं वैज्ञानिकों का ध्यान इस प्रक्रिया की ओर आकृष्ट करने का सफल प्रयास किया है। इस प्रकार से इन सब के बावजूद डार्विन ने विकास की वास्तविकता के लिए कुछ प्रमाण भी प्रस्तुत किए हैं। ये प्रमाण कहीं-न-कहीं आज के वैज्ञानिकों के समस्याओं को सुलझाने में मार्गदर्शक भी है।

—x—